गत वर्ष जून महीने के मध्य से बम विस्फोटों के ३८ मामले हुए हैं। इनमें से १३ काश्मीर में तथा २५ जम्मू में हुए हैं। इसके अतिरिक्त २० मामलों में हथगोले तथा अन्य विस्फोटक पदार्थ पाये गये।

प्राधिकारियों की सतर्कता तथा प्राधिकारियों और जनता के बीच सहयोग परिणामस्वरूप, विध्वंसकारियों द्वारा की गई गड़बड़ों का क्षेत्र बड़ा सीमित रहा जिससे बहुत कम लोग मरे। इन ३८ विस्फोटों के परिणामस्वरूप छः व्यक्ति मारे गये तथा १७ घायल हुए।

विध्वंसक कार्यों तथा बम फेंकने के सम्बन्ध में ३५ व्यक्ति गिरफ्तार किए गए हैं। इनमें से दस व्यक्तियों पर श्रीनगर में श्रीनगर बम दुर्घटना के सम्बन्ध में मुकदमा चलाया जा रहा है। जम्मू प्रान्त में तीन व्यक्तियों पर मुकदमा चल रहा है तथा अन्य दो व्यक्तियों पर शीघ्र ही मुकदमा चलाया जायेगा।

उड़ी में की गई अन्तिम गिरफ्तारियों से पता लगता है कि यद्यपि पाकिस्तानी एजेन्ट तथा विध्वंसकारी अभी भी क्रियाशील है परन्तु उनके विध्वंसक तथा तोड़-फोड़ के प्रयत्नों को प्राधिकारियों द्वारा जनता के सहयोग से काफी हद तक रोका जा रहा है।

जीवन बीमा निगम के मामलों के बारे में जांच आयोग का प्रतिवेदन

†**प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य और वित्त मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू)** : मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि जीवन बीमा निगम के मामलों के बारे में जांच आयोग के प्रतिवेदन पर विचार किया जाये।"

अध्यक्ष महोदय, लगभग दो मास पूर्व इस मामले की भनक मेरे कानों में उस समय पड़ी जब इसको पहले-पहल इस सभा में उठाया गया। उस समय में सभा में, अथवा दिल्ली में उपस्थित नहीं था। उस समय से हम सब लोगों का ध्यान इसी मामले की ओर लगा रहा और हम लोग दिन-प्रतिदिन इस विषय पर अत्यधिक उत्सुकता से ध्यान देते रहे। यह हमारे लिए एक बड़ा ही दुख का विषय रहा और इन दो महीनों में हमें पर्याप्त अनुभव हुए जिनके कारण हमें बहुत कष्ट पहुंचा और सम्भवतया हमारी कुछ आंखें खुलीं और हमें कुछ अक्ल आई। परन्तु हमें यह अनुभव बड़ा महंगा पड़ा क्योंकि इसके कारण हमारे बीच से एक योग्य तथा विद्वान वित्त मंत्री अलग हो गया, जिसकी सेवाओं की हमें इस समय बहुत जरूरत थी।

प्रारम्भ में, मैं यह कह देना चाहता हूं कि यद्यपि हमें इस सिलसिले में बहुत तकलीफ उठानी पड़ी और बहुत त्याग करना पड़ा तथापि इस जांच से समस्त विश्व को तथा भारत की जनता को पता चल गया है कि हम लोकतन्त्र पद्धति का पालन सही रूप में कर रहे हैं। इससे संसद् की प्रतिष्ठा तथा म दा स्थापित हो गई है और जन शक्ति तथा प्रशासन के लिए उच्चादर्शों की नींव पड़ गई है। यह बड़ा लाभ है तथा हम भारतवासियों को इसका सदैव ध्यान रखना चाहिए।

संसदीय प्रक्रिया के अनुसार इस सभा ने कल श्री ति० त० कृष्णामाचारी से उनके त्यागपत्र के बारे में वक्तव्य सुना। उन्होंने पद-त्याग कर दिया तथा जो कुछ हुआ उसका दंड भुगता। इसके अतिरिक्त जहां तक इस सभा का सम्बन्ध है, मैं समझता हूं, यहां पर कुछ और कहना शेष नहीं है।

---

†मूल अंग्रेजी में।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

इस जांच के दौरान में गैर-सरकारी उपक्रम की तुलना में सरकारी उपक्रम, गैर-सरकारी बीमा समवायों की तुलना में राष्ट्रीयकृत जीवन बीमा निगम और व्यापारियों अथवा सरकारी कर्मचारियों के इन उपक्रमों के प्रभारी होने के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा गया है। केवल गवाहों ने ही नहीं अपितु समाचारपत्रों ने इन मामलों की चर्चा की तथा कुछ व्यक्तियों ने राष्ट्रीयकरण की असफलता के बारे में अपना मत व्यक्त किया। यह आयोग के समक्ष जांच का प्रश्न नहीं था। फिर भी मेरे विचार से यह ठीक ही हुआ कि समस्त तथ्य जनता के सामने आ गए।

मुझे याद नहीं है कि बड़ी-बड़ी गैर-सरकारी बीमा समवायों की गंभीर गड़बड़ियों की इस प्रकार कभी आलोचना की गई हो। गैर-सरकारी संस्थाओं में इस प्रकार की गड़बड़ियों में लोग अधिक रुचि नहीं रखते तथा इनके सम्बन्ध में कोई विशेष आलोचना नहीं की जाती। हमें यह याद रखना चाहिए कि जीवन बीमा का राष्ट्रीयकरण इन्हीं गड़बड़ियों तथा इन समवायों की दुर्व्यवस्था के कारण हुआ था। इनका प्रबन्ध तथा नियंत्रण सरकारी कर्मचारियों के हाथों में नहीं था, व्यापारी ही इनकी देख-भाल करते थे। मैं यह इसलिये बता रहा हूं जिससे हम इस मामले पर उचित दृष्टिकोण रख कर विचार कर सकें, मुख्य विषय को छिपाने या दबाने के ख्याल से नहीं या मैं जीवन बीमा निगम द्वारा खरीदे गये शेयरों से जिनके कारण यह जांच हुई, सम्बन्धित घटनाओं का महत्व कम करने के विचार से ऐसा नहीं कह रहा हूं।

मैं एक बात यह भी बता देना चाहता हूं कि जीवन बीमा निगम कुछ महीनों से अपना काम सुचारू रूप से कर रहा था और पहले से कहीं अधिक व्यापार कर रहा है। प्रारम्भिक कुछ महीनों के पश्चात् जिनमें पुनर्गठन सम्बन्धी समस्यायें सुलझाई गई थीं, जिसके कारण धंधे में कुछ कमी आ गई थी, इसके व्यवसाय में पर्याप्त प्रगति हुई है। १९५५ में निगम के अब अधीन आने वाले विभिन्न जीवन बीमा समवायों ने २५८ करोड़ रुपये का व्यवसाय किया था। इसके पश्चात् यह परिवर्तन हुआ जिसके कारण बड़ी गड़बड़ी हुई। इसलिये १९५६ में, यह व्यवसाय २०० करोड़ रुपये रह गया था अर्थात् ५८ करोड़ रुपये कम हो गया था। १९५७ में अर्थात् गत वर्ष यह २७३ करोड़ रुपये हो गया, जिसका अर्थ हुआ कि असंगठन के कारण हुई हानि को ही पूरा नहीं किया गया अपितु पहले अधिकतम आंकड़ों से भी बहुत आगे बढ़ गया।

इन आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जीवन बीमा निगम ने संतोषजनक काम किया है और इसलिए इसका संचालन करने वाले पदाधिकारी प्रशंसा के पात्र हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि उनकी गलतियों पर हम कोई ध्यान न दें अथवा इन अच्छे कार्यों के कारण गलतियों को दबा दिया जाये। परन्तु हमें इससे यह सहायता मिल जाती है कि हम इस मामले पर सही दृष्टिकोण से विचार कर सकते हैं और एक विशिष्ट मामले को उसी के गुणावगुणों के आधार पर देख सकते हैं और राष्ट्रीय-करण के सामान्य और व्यापक प्रश्न को इससे अलग रख सकते हैं।

इससे पहले म आगे कुछ कहूं, मैं सरकार की ओर से अभी बता देना चाहता हूं कि हमारी यह राय है कि छः समवायों के शेयरों की खरीददारी का यह सौदा व्यावसायिक सिद्धान्तों के अनुसार नहीं हुआ है। और भी कई कारणों से मैं इसके औचित्य का विरोधी हूं। इसलिए इस सौदे के सम्बन्ध में आयोग द्वारा बताई गई बातों की हम स्वीकार करते हैं। आयोग के प्रतिवेदन का अधिकांश भाग इसी मामले से सम्बन्धित है।

जैसा कि जांच आयोग के सभापति ने भी कहा है कि मैं यह कहना चाहता हूं कि इस जांच में बहुत सी ऐसी बातें सामने आई हैं जिनके सम्बन्ध में कोई भी स्पष्टीकरण नहीं दिया जा सकता और

इस जांच से भी हमें सभी तथ्यों का पता नहीं लगा है जिसके कारण कई बातों पर हम अपनी स्पष्ट राय व्यक्त नहीं कर सकते। मैं नहीं समझ सका हूं कि किन कारणों से शेयर खरीदने तथा मूल्य निश्चित करने में सामान्य सावधानी नहीं बरती गई तथा विनियोजन समिति का परामर्श क्यों नहीं लिया गया और सौदे की कीमतों का विरोध क्यों नहीं किया गया। इसका अभी तक पता नहीं लगा है। हम नहीं जानते कि और अधिक जानकारी अभी अथवा भविष्य में, प्राप्त करना सम्भव होगा या नहीं। परन्तु इसके लिये प्रयत्न अवश्य किया जायेगा और सम्भवतया तब ही हम इस अजीब से सौदे को समझने की स्थिति में हो सकेंगे।

इन सौदों से किसी न किसी रूप में सरकार के तथा निगम के कितने ही पदाधिकारी सम्बन्धित हैं। हमारा विचार है कि जिन पदाधिकारियों का इस सौदे को पूरा करने में हाथ रहा है, उनके विरुद्ध आयोग द्वारा बताई गई बातों के आधार पर उचित कार्यवाही प्रारम्भ की जाये।

परन्तु मैं सभा से निवेदन करना चाहता हूं कि हालांकि ऐसा किया जाना आवश्यक है, लेकिन हमारे लिए यह उचित नहीं होगा कि हम ऐसे व्यक्तियों के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय करलें, जो अपना बचाव करने के लिए यहां उपस्थित नहीं हैं। इसके लिए प्रक्रिया निर्धारित है और उसका पालन किया जाना चाहिए। इस सभा की यह प्रथा रही है कि किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में कोई भी निर्णय नहीं किया जाये तथा किसी ऐसे व्यक्ति पर आरोप नहीं लगाये जायें जिसको अपना बचाव करने का अवसर नहीं दिया गया हो। ऐसा विशेषतया सरकारी कर्मचारियों के सम्बन्ध में किया गया है।

हमें यह भी याद रखना चाहिये कि यदि एक व्यक्ति को जिम्मेदार ठहराया जाये तो इसका यह अर्थ नहीं हो जाता है कि सभी कर्मचारी वर्ग दोषी हैं अथवा भर्त्सना के पात्र हैं। एक मामले को लेकर सामान्य रूप देना उचित नहीं होगा, विशेषतया प्रशासनिक अधिकारियों के मामले को लेकर ऐसा करना गलत होगा।

मैं यह बता देना चाहता हूं कि भारत में काम करने वाले वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारियों की एक बहुत बड़ी संख्या ऐसी है जिन्हें मैं अत्यधिक योग्य और ईमानदार समझता हूं जिन्होंने देश की बहुत सेवा की है। सरकार का कार्य संभालने के समय से मेरा व्यक्तिगत रूप से बहुत से अधिकारियों के साथ सम्बन्ध रहा है। पहले मैं यह नहीं कह सकता कि इनमें से प्रत्येक अधिकारी बहुत योग्य तथा कार्यकुशल है। परन्तु मुझे विश्वास है कि एक वर्ग के रूप में यदि उनकी तुलना विश्व के किसी देश के ऐसे ही वर्ग से की जाये तो हमारे अधिकारियों का पलड़ा भारी रहेगा। उनके द्वारा किए गए कामों के लिए मैं उनका आभारी हूं। उन्हें नई स्थिति तथा नये प्रकार के काम करने पड़े। उन्होंने नई स्थिति में अपने आपको अक्सर बड़ी सफलता के साथ डाला है। हमारे काम बहुत बढ़ गए हैं तथा कार्यक्षेत्र भी बहुत विस्तृत हो गया है। हमारे देश में सामाजिक तथा औद्योगिक क्षेत्र में बहुत अधिक काम होता है। मैं नहीं कह सकता कि हर स्थान पर सब काम ठीक हो रहे हैं परन्तु हम लगातार प्रयत्न कर रहे हैं कि अधिक कार्यक्षमता आये तथा काम का उच्चस्तर बनाया जाये।

मैं यहां यह बताना चाहता हूं कि जांच के दौरान में, हालांकि प्रतिवेदन में नहीं, ऐसे कुछ व्यक्तियों का जिक्र किया गया है जो इन सौदों से एकदम अलग रहे और ऐसा करना उनके स्वयं के और उनके पदों के हित में नहीं था। इस सिलसिले में रिजर्व बक के गवर्नर का नाम आया है। इस खरीददारी से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था और मुझे खेद है कि इतने प्रतिष्ठित तथा योग्य व्यक्ति पर आक्षेप किया गया है जो कि एक महत्वपूर्ण और उत्तरदायित्वपूर्ण पद को संभाले हुए हैं।

इस मामले पर योजना आयोग बराबर विचार करता रहा है । यदि माननीय सदस्य द्वितीय योजना के प्रतिवेदन को पढ़ें तो उनको पता लगेगा कि इस बारे में उसमें बहुत कुछ कहा गया है कि हमें इन उच्च पदों के लिये व्यक्तियों का प्रशिक्षण किस प्रकार करना है । उसी में, हमने यह बताया है कि यह लोगों को प्रशिक्षित करने का ही मामला नहीं है अपितु यह प्रश्न नवयुवक और योग्य व्यापारियों को सेवा में नियुक्त करके विशेष प्रशिक्षण देने अथवा प्रशासनिक पदाधिकारियों को प्रशिक्षित करने का है । हम लोगों को भरती कर रहे हैं और उनको प्रशिक्षित कर रहे हैं जिससे वह भविष्य में आने वाली जिम्मेदारियों को वहन करने के लिये तैयार रहें ।

अब यह प्रश्न उठाया गया कि सरकार को स्वायत्तशासी निगमों के कार्य संचालन में क्या करना चाहिये । इस पर हमें बहुत गंभीरता से विचार करना है । आयोग ने कुछ सिद्धान्तों की सिफारिश की है । हम निश्चित रूप से इन सिद्धान्तों के सम्बन्ध में दी गई सिफारिशों की जांच करेंगे । खुलासा तौर पर, हम इससे सहमत हैं कि स्वायत्तशासी निगमों को, निर्धारित नियंत्रणों के अलावा, अन्य सभी प्रकार से स्वाधीन रखना चाहिए ।

अब आप जीवन बीमा निगम अधिनियम को देखिये । यह याद रखना चाहिए कि निगम की सारी पूंजी सरकार ने लगाई है । अधिनियम के अनुसार सरकार को पूर्ण बोर्ड नियुक्त करने, नियम निर्धारित करने और निगम द्वारा बनाये गये नियमों का अनुमोदन करने तथा निगम को समाप्त करने का अधिकार है । इस प्रकार यद्यपि दैनिक कार्यों के लिए निगम को एक स्वतन्त्र और स्वशासी निकाय बना दिया गया था परन्तु उसके मार्गदर्शन के लिए सरकार ने व्यवस्था की थी । संसद् ने एक निगम द्वारा इस व्यापार को ठीक प्रकार से चलाने और आवश्यकता पड़ने पर उचित निदेश देने का उत्तरदायित्व सरकार को सौंप दिया था ।

१८ मई, १९५६ को श्री सी० डी० देशमुख न बताया था कि एक परित्राण यह भी है कि विनियोजन के मामले में निगम को निदेश देने का अधिकार सरकार को है । विनियोजन का अर्थ केवल सामान्य विनियोजन से नहीं है, विशेष विनियोजन से भी है । अत: सिद्धान्त की दृष्टि से यह कहना कि सरकार को निगम से बिल्कुल अलग रहना चाहिए संसद् के निर्णय को चुनौती देना है ।

साथ ही मैं यह भी कहना चाहता हूं कि स्वायत्तशासी निगम के कामों में सामान्यतया दखल देना ठीक नहीं है । कुछ परित्राणों के अधीन रहते हुए शक्ति का और अधिकारों का प्रत्यायोजन अवश्य होना चाहिए । यदि अति केन्द्रीकरण हो जायेगा तो कोई सरकार नहीं चल सकती । हम अन्य विभागों में भी विकेन्द्रीकरण की नीति अपना रहे हैं ।

इस जांच ने नये-नये प्रश्न पैदा कर दिये हैं । भारत में ही नहीं ब्रिटेन में भी हाल ही में बैंक दर जांच के सम्बन्ध में ऐसे ही प्रश्न पैदा हुए हैं । उस जांच के समाप्त होने के बाद कई प्रकार की शंकायें उठाई गईं कि ऐसे मामलों में उचित रूप से किस प्रकार जांच की जानी चाहिए । इंगलैंड में जांच ी प्रणाली यह है कि वहां मामला सरकारी वकील (ट्रेजरी सालीसिटर) को सौंप दिया जाता है और पुलिस विभाग का प्रधान (पुलिस चीफ) उसकी सहायता करता है । जांच और छानबीन पूरी हो जाने के बाद सारी जानकारी जांच आयोग के सामने रखी जाती है । आयोग गवाहों के बयान नहीं लेता; बयान लेने का काम महान्यायवादी का होता है जिसके पास सरकारी वकील द्वारा भेजी गई सारी जानकारी भेज दी जाती है । महान्यायवादी गवाह की जांच करता है और बहस करता है और ऐसा करते समय उसका उद्देश्य होता है तथ्यों का पता लगाना ।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

इस सम्बन्ध में **लन्दन टाइम्स** में प्रकाशित एक लेखा का उद्धरण पढ़ कर सुनाऊंगा। वास्तव में इस मामले पर कई लेख प्रकाशित हुए थे क्योंकि इस सम्बन्ध में इंगलैंड के लोग बहुत दिलचस्पी ले रहे थे जैसा कि इस मामले में भारत के लोग भी दिलचस्पी ले रहे हैं और अपने मत व्यक्त करते हैं। यह बात ध्यान में रहे कि ये दोनों जांच एक प्रकार की नहीं हैं और न इनमें मामला एक-सा है। पर दोनों में कुछ साम्य अवश्य है और एक से सवाल पैदा हुए हैं।

यह सब मैं इसलिए बता रहा हूं ताकि भविष्य में हम इसका लाभ उठा सकें। अभी उस दिन मैंने कहा था कि जांच का ढंग संतोषजनक नहीं था। कुछ लोगों ने उसका अर्थ निकाला कि मैं आयोग के सभापति की आलोचना कर रहा हूं। पर ऐसी बात नहीं थी। मैं तो उस ढंग की आलोचना कर रहा था जिससे यह जांच की गई। वास्तव में दोष हमारा है कि हमने इन सब बातों पर पहले विचार नहीं किया। सच तो यह है कि हम जल्दीबाजी में आ गये। संसद् इसके बारे में बहुत आतुर थी---जो वास्तव में उचित ही थी। हम से पूछा जाता है और शायद अब भी कार्यसूची में कुछ प्रश्न हैं कि क्या मंत्रिमंडल के कुछ सदस्य इस जांच में विलम्ब करना चाहते थे? या विरोध करना चाहते थे? ऐसी स्थिति में तुरन्त कार्यवाही करना हमारे लिए जरूरी था। शुरू के दिन से ही हम सारे तथ्यों को जानने के लिए और कार्यवाही करने के लिए इच्छुक थे। पर हम यह नहीं समझ पाये कि इस काम को अच्छी तरह कैसे किया जाये। अच्छी तरह विचार किये बिना हमने काम शुरू कर दिया इसी कारण कठिनाइयां पैदा हुईं। अतः मैंने जो आलोचना की थी वह मान्य न्यायाधीश की कदापि नहीं थी। हमें तो अब यह विचार करना चाहिए कि जांच के सम्बन्ध में हमें किस प्रकार की प्रक्रिया अपनानी चाहिए।

अब उस अखबार के उद्धरण लीजिए उसमें कहा गया है---"न्यायाधिकरण प्रक्रिया के औचित्य का सारा प्रश्न, जिसका जन्म संसद् से हुआ, आज हमारे सामने है और क्या ढंग अपनाया गया और जो ढंग चला आ रहा है उससे कई प्रकार की गलतफहमियां पैदा हो गई हैं।" और आगे कहा गया है कि "संदेह सब से पहले उन प्रश्नों के बारे में हुए जो एक विशेष व्यक्ति के सम्बन्ध में पूछे गये थे। मि० विल्सन और सर लेसली पामर द्वारा दिये गये स्पष्ट वक्तव्यों को ध्यान में रखते हुए कि प्रश्न उन पर आरोप या लांछन लगाने के लिए नहीं पूछे गये थे, यह विचार करने की आवश्यकता है कि क्या जिस ढंग से प्रश्न पूछे गये थे वह ढंग उचित था, खास तौर पर ....." इसके बाद एक विशेष प्रश्न के बारे में कहा गया है कि क्या मि० थार्नीक्रोट ने ऐसा किया या नहीं ..... "क्या संसद् में इस प्रकार के लांछन लगाने वाले प्रश्न पूछे जाने चाहिएं।"

आगे कहा गया है कि "प्रश्न वह भी पैदा होता है कि क्या संसद् के सदस्यों के विशेषाधिकार पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए" पर इस फैसले पर पहुंचा गया है कि "ऐसा करना अनुचित होगा। चाहे विशेषाधिकारों का दुरुपयोग हो पर विशेषाधिकार सुरक्षित रखा जाना चाहिए।" मैं इस बात से बिल्कुल सहमत हूं "यह संसद् का कर्त्तव्य है कि वह सदस्यों को इस विशेषाधिकार का दुरुपयोग न करने दें।"

आगे उसमें कहा गया है---"सम्भव है हाल में हुई इस घटना के कारण संसद् के दोनों पक्षों के सदस्य दूसरे व्यक्ति को परेशान करने के लिये इस प्रकार के लांछन लगाने के रवैये को अख्तियार करें।"

एक और कठिन प्रश्न पैदा हुआ कि "मामले को एक निमित जांच आयोग को सौंपने से पहले क्या उसकी जांच एक छोटे स्तर पर की जानी चाहिए? यदि हां, तो क्या यह छोटे स्तर की जांच खुले तौर पर हो या बन्द हो?" तरह-तरह के प्रश्नों पर विचार किया गया है। "यदि सार्वजनिक रूप से जांच करने का निश्चय किया जाता है तो क्या न्यायाधिकरण, जोकि १९२१ के अधिनियम के

फलस्वरूप बना है, इस कार्य के लिए उचित संस्था होगी ? स्पष्ट है कि संसद् इस प्रकार की जांच नहीं कर सकती। दूसरा विकल्प प्रवर समिति हो सकता है। पहले इसी प्रकार के एक मामले में प्रवर समिति नियुक्त की गई थी पर संसद् के सदस्य दल के आधार पर व्यवहार करने लगे जिसके परिणामस्वरूप १९२१ का अधिनियम पारित किया गया। यद्यपि यह अधिनियम जल्दी में पारित किया गया था पर इसमें यह जो बात कही गयी है कि इस प्रकार के मामलों को एक न्यायिक संस्था को सौंपा जाये जिसे उच्च न्यायालय के समान अधिकार प्राप्त हों, बिल्कुल ठीक है।"

"१९२१ के अधिनियम में न्यायाधिकरण की सदस्यता और उसकी कार्यवाही के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया था और यह दोनों बातें बाद में अनुभव के आधार पर बनाई गई हैं।" १९२८ में संसद् के दो सदस्यों ने न्यायाधिकरण के सदस्यों की हैसियत से एक दूसरे के विरुद्ध मत अपनाये थे, इसलिये उसके बाद न्यायपालिका के लोगों को ही न्यायाधिकरण का सदस्य बनाया जाने लगा। इससे काम में सुविधा हो गई।"

"१९३६ में आय-व्ययक का भेद खुल जाने की जांच के समय तक प्रक्रिया यह थी कि न्यायाधिकरण स्वयं जांच करता था। महान्यायवादी गवाही संक्षिप्त रूप में इकट्ठी करता था। और गवाहों से बहस न्यायाधिकरण स्वयं करता था।" "१९३६ में न्यायाधिकरण ने शिकायत की कि गवाहों की न्यायाधिकरण द्वारा जो जांच की जाती है उसके सम्बन्ध में यह धारणा बनाई जा सकती है कि न्यायाधिकरण के सामने जो गवाह उपस्थित होते हैं उनमें से किसी गवाह के सम्बन्ध में न्यायाधिकरण के विचार पहले से ही खिलाफ हों। उस समय से प्रक्रिया यह हो गयी कि महान्यायवादी स्वयं ही गवाहों की जांच करने लगा। पर इस परिवर्तन के अनुचित दुष्परिणाम भी हो सकते हैं। लोगों की नजर में, महान्यायवादी अपना काम खिलाफ होकर ही शुरू करता है। चूंकि वह सरकारी पक्ष का व्यक्ति होता है और उसे निष्पक्ष व्यक्ति की हैसियत से काम करना होता है अतः वह सोचता है या उससे आशा की जाती है कि वह किसी के प्रति कड़ाई बरतने में कोई लिहाज नहीं करेगा। यह कड़ाई इस प्रकार बरती जाती है कि महान्यायाधीश एक लम्बा चौड़ा वक्तव्य देता है जिसका आधार किसी व्यक्ति के द्वारा बताई गई बातें होती हैं और उस व्यक्ति के वकील आदि की ओर से शुरू में कोई वक्तव्य नहीं दिया जाता। मामले में अन्तर्ग्रस्त व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए वकील लगाने में बड़ा खर्च होता है और थोड़े ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जो इतना खर्च बरदाश्त कर सकते हैं।"

मैं सारा भाग पढ़ कर सुनाने की आवश्यकता नहीं समझता। पहली बात तो यह है कि बिना पर्याप्त कारण व पर्याप्त आरम्भिक जांच किये ऐसा जांच आयोग नहीं नियुक्त किया जाना चाहिए। मैंने तो यह सब पढ़ कर केवल इसलिए सुनाया कि कसे जटिल प्रश्न ऐसे मामलों में अन्य स्थानों पर पैदा हुए हैं जैसे कि हमारे यहां भी हुए हैं। यह किसी विशेष प्रक्रिया की आलोचना करने का सवाल नहीं है। यह आवश्यक नहीं कि इस मामले में या अन्य किसी मामले में हमें ब्रिटेन की इस प्रक्रिया का अनुसरण करना चाहिए। पर चूंकि बहुत से मामलों में हम ब्रिटिश संसद् की प्रक्रिया को मानते हैं अतः हमें उससे कुछ शिक्षा लेनी चाहिए। अन्य बातों का ध्यान रखते हुए, यदि भविष्य में इस प्रकार का कोई मामला आये तो उसके सम्बन्ध में पहले कुछ आरम्भिक जांच अवश्य कर लेनी चाहिए और उसके बाद सारी जानकारी न्यायाधिकरण के सामने रख दी जानी चाहिये; इससे न्यायाधिकरण को सहायता मिलेगी।

ऐसी जांच का एक और पहलू है। यह जांच एक न्यायिक प्रक्रिया के आधार पर, गौरवपूर्ण ढंग पर की जानी चाहिए और इसमें कोई सार्वजनिक हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। ऐसे मामलों में स्वाभाविक तथा उचित है कि जनता काफी दिलचस्पी ले; मेरा अपना भी यही ख्याल है कि आमतौर

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पर खुली जांच बन्द जांच से अच्छी होती है । पर यदि न्यायालय का सारा वातावरण सार्वजनिक उत्तेजना या सार्वजनिक हस्तक्षेप से भर जाता है तो न्यायालय का या किसी सामान्य जांच का वातावरण सामान्यतया जैसा होना चाहिए वैसा नहीं रह जाता । सच तो यह है कि इस आयोग के सभापति, न्यायमूर्ति छागला, न्यायालय में होने वाली भीड़भाड़ से बहुत परेशान थे और उन्होंने इसकी शिकायत भी की थी क्योंकि न्यायालय के सभापति या न्यायाधीश को न्यायालय में भीड़भाड़ बुरी लगती है । गवाहों को तो इससे और भी अधिक कठिनाई होती है अतः इस बात का प्रयत्न किया जाना चाहिए कि इस प्रकार की सार्वजनिक उत्तेजना न्यायालय में न फैलने पावे ।

इसके अलावा मंत्री पद के उत्तरदायित्व सम्बन्धी तथा अन्य प्रकार के प्रश्न भी हैं । ये प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण हैं । इन प्रश्नों पर विचार करना जांच आयोग के कार्य क्षेत्र के बाहर है । संसद् ही इन प्रश्नों के सम्बन्ध में निर्णय करती है और ऐसे प्रश्न प्रायः परम्परा और प्रथा के प्रश्न होते हैं । मैं इस मामले में अधिक विस्तार से कुछ नहीं कहना चाहता पर इतना अवश्य कहना चाहता हूं कि हम मंत्री के उत्तर-दायित्व के मोटे सिद्धान्त को स्वीकार करते हैं । पर यह कहना ठीक नहीं होगा कि मंत्री के अधीन जो पदाधिकारी होते हैं उनके सभी कार्यों के लिये मंत्री उत्तरदायी हमेशा होता है । मैं कहना चाहता हूं कि इस जांच का सरकार की नीति के मोटे-मोटे सिद्धान्तों से कोई सम्बन्ध नहीं था । इस प्रकार की जांच का यह काम नहीं कि उसमें संसद् द्वारा निर्धारित नीतियों की आलोचना की जाये या उन में दोष बताये जायें । पर मैं जानता हूं कि इस मामले को लेकर सरकार की बीमे के बारे में ही नहीं सरकारी क्षेत्र के बारे में नीति सम्बन्धी बातों की निन्दा करने के अनेक प्रयत्न किये गये और समाचारपत्रों में भी इसका उल्लेख किया गया । इस बात को मैं दृढ़ता के साथ और स्पष्ट रूप से बता देना चाहता हूं कि सरकारी क्षेत्र के सम्बन्ध में सरकार की जो नीति है, सरकारी क्षेत्र को बढ़ाने के लिये, सरकार उस पर दृढ़ है और आगे भी सरकार उसी नीति पर मजबूती से चलेगी । हमें इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि यह नीति बिल्कुल सही है और इसका अनुसरण होना चाहिये । इस विशेष मामले का इस नीति से कोई सम्बन्ध नहीं है ।

मैं पहले बता चुका हूं कि सरकार आयोग के निष्कर्षों को स्वीकार करती है कि ६ समवायों के अंशों के खरीदने का जो सौदा हुआ वह व्यापार के सिद्धान्तों के अनुसार नहीं था और अन्य कई कारणों से भी अनुचित था । सरकार का विचार है कि आयोग के निष्कर्षों के आधार पर इस सौदे के लिए उत्तरदायी पदाधिकारियों के विरुद्ध उचित कार्यवाही की जानी चाहिए । और आयोग ने सरकार व निगम को अपनाने के लिए जिन सिद्धान्तों की सिफारिश की है उनकी छानबीन भी सरकार करायेगी ।

मैं सभा के सामने एक संकल्प रख चुका हूं और यह प्रस्ताव करना चाहता हूं कि इस प्रतिवेदन पर विचार किया जाये । पर आपकी अनुमति से, श्रीमान्, अब मैं एक स्थानापन्न संकल्प विचार करने के लिए तथा स्वीकृत करने के लिये प्रस्तुत करना चाहता हूं । यह संकल्प इस प्रकार है :

कि मूल प्रस्ताव के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये, अर्थात् :—

"यह सभा भारत के जीवन बीमा निगम के मामलों के बारें में जांच आयोग के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् सरकार की ओर से दिये गये वक्तव्यों का अनुमोदन करती है कि :

(१) सरकार आयोग की इस उपपत्ति को स्वीकार करती है कि ६ समवायों के अंशों के खरीदने का जो सौदा किया गया था वह व्यापारिक सिद्धान्तों के अनुसार नहीं था और अन्य कई आधारों पर अनुपयुक्त भी था;

(२) आयोग की उपपत्तियों के आधार पर इस सौदे के लिए उत्तरदायी पदाधिकारियों के बारे में सरकार का उपयुक्त कार्यवाही करने का विचार है; और

(३) सरकार तथा निगम द्वारा अपनाये जाने के लिए आयोग ने जिन सिद्धान्तों की सिफारिश की है सरकार उनका परीक्षण सावधानीपूर्वक करना चाहती है।"

†**श्री सुरेन्द्र नाथ द्विवेदी** (केन्द्रपाड़ा) : क्या प्रधान मंत्री मूल प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं कर रहे हैं ?

†**अध्यक्ष महोदय** : प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ। मुझे १८ स्थानापन्न प्रस्तावों की सूचना प्राप्त हो चुकी है। यह स्थानापन्न प्रस्ताव परिचालित कर दिया जायेगा और सभी स्थानापन्न प्रस्तावों को इस प्रस्ताव का स्थानापन्न प्रस्ताव माना जायेगा।

†**श्री जयपाल सिंह** : प्रधान मंत्री ने अभी यह स्थानापन्न प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया है।

†**अध्यक्ष महोदय** : वह प्रस्ताव प्रस्तुत कर चुके हैं।

†**श्री जयपाल सिंह** : मूल प्रस्ताव को वापस लेने के लिये उन्हें सभा की अनुमति लेनी चाहिए।

†**अध्यक्ष महोदय** : यह आवश्यक नहीं है।

†**श्री अ० क० गोपालन** (कासरगोड) : क्या इस स्थानापन्न प्रस्ताव पर संशोधन प्रस्तुत किये जा सकते हैं क्योंकि हमने अपने स्थानापन्न प्रस्ताव पिछले प्रस्ताव पर दिये हैं।

†**अध्यक्ष महोदय** : जी हां। यदि स्थानापन्न प्रस्तावों में कुछ हेर-फेर की जरूरत हो तो उनकी अनुमति दी जायेगी ताकि वे नये प्रस्ताव के अनुकूल हो जायें। यदि माननीय सदस्य सहमत हों तो पहले वाले प्रस्ताव और इस स्थानापन्न प्रस्ताव दोनों प्रस्तावों पर प्रस्तुत किये गये स्थानापन्न प्रस्तावों को इस स्थानापन्न प्रस्ताव का स्थानापन्न प्रस्ताव मान लिया जाये। माननीय सदस्यों के लिए १५ मिनट और समूहों के नेताओं के लिए २० मिनट का समय होगा। माननीय सदस्यों को पता है कि आज सभा की बैठक ६ बजे तक होगी।

†**श्रीमती रेणु चक्रवर्ती** (बसिरहाट) : मैं जानना चाहती हूं कि क्या संशोधन अभी दे दिये जायें या कल दिये जा सकते हैं।

†**अध्यक्ष महोदय** : कल नहीं, आज ही किसी समय।

†**श्री श्री० अ० डांगे** (बम्बई नगर-मध्य) : प्रधान मंत्री ने जांच के बारे में जो बातें कही हैं उनसे जांच के निष्कर्ष का पता लगता है। इन बातों, मूल प्रस्तावों और उस के साथ ही तुरन्त प्रस्तुत किये गये संशोधन से पता लगता है कि सरकार इस उलझन में थी कि जांच का परिणाम लोगों के सामने लाने से उन्हें लाभ होगा अथवा नहीं। यह उलझन स्वाभाविक ही है अतः इसी लिए उन्होंने आत्मश्लाघा करते हुए कहा है कि हमारे अपराध दूसरे लोकतन्त्र देशों से कम हैं। किन्तु इस से हम ठीक निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकते।

प्रश्न यह नहीं कि सत्तारूढ़ दल अथवा सरकार की निन्दा की जाए वरन् यह है कि वास्तविक को देखा जाए। दिसम्बर में इस विषय पर चर्चा हुई थी और फिर सरकार को जांच आयोग नियुक्त करने में एक महीना लग गया था।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मुझे खेद है कि मुझे बीच में बोलना पड़ रहा है किन्तु माननीय सदस्य यह गलत कह रहे हैं कि एक महीना लग गया था।

†मूल अंग्रेजी में।